वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

वेद प्रकाश

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ (३०/-वार्षिक) रुपये अप्रैल २०१५

कुल पृष्ठ संख्या २०, वजनः 40 ग्राम

प्रकाशन तिथिः 6 अप्रैल 2015

अन्तःपथ

आस्तिकता का आधार सकारात्मक दृष्टिकोण | ३ से ९
(श्रीमती सुधा सावंत)

छोटी आयु में बड़े धार्मिक काम करने वाले अमर मनीषी पं. गुरुदत्त विद्यार्थी | १० से १४
(मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून)

ईश्वर का नाम 'सच्चिदानन्द' क्यों व कैसे? | १४ से १७
(मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून)

श्रेष्ठ व्यक्ति बोलने में संयमी होता है, लेकिन अपने कार्यों में अग्रणी होता है।

बोध कथा

ठगों ने ठगा-बकरी का बच्चा

एक साधारण अनपढ़ व्यक्ति ने किसी से खरीदा–एक बकरी का बच्चा। वह बच्चा अभी पूरी तरह चल नहीं सकता था। इसलिए उस व्यक्ति ने उसे कंधे पर लाद लिया और घर की ओर चल दिया। मार्ग में उसे एक ठग मिला। उस ठग ने उस व्यक्ति से कहा–'यह कंधे पर कुतिया कैसे लाद रखी है?' 'यह कुतिया नहीं, यह तो बकरी का बच्चा (मेमना) है', पंडित जी ने उत्तर दिया। 'है तो कुतिया', ठग बोला। व्यक्ति ठग की बात को अनसुनी करते हुए चलता गया।

थोड़ी दूर आगे जाने पर उसे उसका साथी एक और ठग मिला। उसने कहा–अरे भाई! आपके कंधे पर क्या है? 'बकरी का बच्चा है, चलने में असमर्थ था, इसलिए कंधे पर बैठा रखा है।' मुझे तो यह बकरी का बच्चा नहीं लगता, यह तो कुतिया लगती है' ठग ने कहा। यह कहकर ठग आगे चल दिया। वह व्यक्ति अभी कुछ दूर ही आगे बढ़ा था, कि उसका सामना उनके तीसरे ठग से हुआ। वास्तव में उन तीनों ठगों ने मिलकर उस व्यक्ति के मेमने को लूटने की एक योजना बना रखी थी। उस योजना के अनुसार ही बारी-बारी से वे उस व्यक्ति को भ्रमित करने में लगे हुए थे।

तीसरा ठग आगे बढ़ कर बोला–'भाई साहब! यह सिर पर कुतिया काहे को उठा कर घूम रहे हो।' तीसरी बार जब वही एक बात उस व्यक्ति के कान में सुनाई दी, तब उसके मन में संदेह हुआ। वह सोचने लगा कि कहीं वह मेमने के स्थान पर सचमुच एक कुतिया का बच्चा ही तो नहीं खरीद लाया। एक व्यक्ति की दृष्टि तो गलत हो सकती है, परन्तु जब तीनों व्यक्ति एक ही बात को दोहरा रहे हैं, तो उनकी बात झूठ कैसे हो सकती है! ठगों का जादू चल गया। वह व्यक्ति असमंजस में पड़ गया और उस मेमने को कुतिया समझ कर वहीं छोड़ कर घर की ओर चला गया। पीछे से तीनों ठग वहीं इकट्ठे हो गए और मेमने को लूटकर भाग निकले।

शिक्षाः *धर्म, विवेक, तर्क–की कसौटी पर जो बात ठीक उतरे, उसे ही मानो। भेड़-चाल, भीड़, तंत्र, अधर्म और अंधविश्वास से बचो।*

–श्री सुभाष चन्द्र गुप्ता कृत 'श्रेष्ठ कहानियाँ' से साभार

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६४ अंक ०९ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, अप्रैल, २०१५

सम्पा० **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व० **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

आस्तिकता का आधार

—श्रीमती सुधा सावंत

क्या ईश्वर है?

यदि है, तो कहां है?

क्यों माने हम ईश्वर को?

वह न तो दिखाई देता है न सुनाई देता है?

अक्सर कक्षा में विद्यार्थी भी यही कहते हैं कि उन्हें ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं है। अब विज्ञान की शिक्षा के साथ यह विचार भी बढ़ता जाता है कि जिसे देख सुन नहीं सकते, छू नहीं सकते, जिस पर प्रयोग नहीं कर सकते उसके अस्तित्व पर विश्वास नहीं करना चाहिए। परन्तु ऐसे नास्तिकतावादी यह भूल जाते हैं कि उन्होंने अपनी ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति को कितना सीमित कर लिया है। न ठीक से देख सुन पाते हैं न समझ पाते हैं।

विद्यार्थी की शंका के समाधान के लिए तो यह उदाहरण ही पर्याप्त होता है कि जैसे वे कक्षा में चलते हुए पंखों को देखकर या 'ट्यूब लाइट' को जलते हुए देखकर समझ लेते हैं कि 'विद्युत' है। किन्तु क्या वे विद्युत को देख पाते हैं? "नहीं।" ऐसे ही जब वे हंसते, गाते, नाचते-कूदते बच्चों को, जीव जन्तुओं को देखते हैं तो उन्हें समझ लेना चाहिए कि ईश्वर है, वही सर्वशक्तिमान है और उसकी ही शक्ति से जीवमात्र प्राणवान् है, क्रियाशील है। उस ईश्वर को इन ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा नहीं देखा या सुना जा सकता है उसे तो बस अन्तरात्मा में अनुभव किया जा सकता है। हमारे ज्ञान के लिए यजुर्वेद के बत्तीसवें अध्याय का तीसरा मंत्र इस प्रकार है:—

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्‌यशः।
हिरण्यगर्भऽइत्येष मा मा हिं सीदित्येषा
यस्मान्न जातऽइत्येषः।

यजुर्वेद अध्याय 32, मंत्र 3

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेदभाष्य में इसका भावार्थ इस प्रकार किया है:–

भावार्थ: [" हे मनुष्यों! जो कभी देहधारी नहीं होता, जिसका कुछ भी परिमाण सीमा का कारण नहीं है, जिसकी आज्ञा का पालन ही नामस्मरण है जो उपासना किया हुआ अपने उपासकों पर अनुग्रह करता है वेदों के अनेक स्थलों पर जिसका महत्व कहा गया है जो न ही मरता, न विकृत होता न नष्ट होता है, उसी की उपासना निरन्तर करो। जो, इससे भिन्न उपासना करोगे तो महान पाप से युक्त होकर आप लोग दुख क्लेशों से नष्ट होंगे।"

तो उससे स्पष्ट हो जाता है कि परमेश्वर को किसी रूप में या किसी स्थान विशेष पर नहीं देखा जा सकता। वह तो सर्वव्याप्त है। उसे तो केवल ज्ञान चक्षुओं से समझा जा सकता है। प्रकृति के कण–कण में, फल–फूल में, हर जीव में उसके अस्तित्व को अनुभव किया जा सकता है।

वह कैसे करें? तो देखिए, जैसे फूल है। उसे सूर्य का प्रकाश मिलता है अच्छी खाद, हवा, पानी, मिलता है तो फूल खिलकर अपनी पूर्णता को प्राप्त हो जाता है और सुगन्ध बिखेरता है। तो ये देवता सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, जल, आकाश उसे पूर्णता प्रदान करते हैं। और इन देवों का भी आदि देव है परमेश्वर। हम उसे पहचानें कैसे? सुबह सूर्य नमस्कार करें। प्राणायाम करें। व्यायाम करें। अपने शरीर को, मन–बुद्धि को शुद्ध प्रकाश दें, जल दें, वायु दें, वेद तथा अन्य आर्ष ग्रंथों का अध्ययन मनन करके बुद्धि को ज्ञान से युक्त करें, उसे पूर्ण विस्तार दें। इस प्रकार स्वयं अन्तरात्मा में ईश्वर की अनुभूति कर पायेंगे। यही बात बड़े–बड़े ऋषि मुनियों ने कही है और यही सत्य अनपढ़ किन्तु मेधावी कबीर ने इस रूप में

प्रतिपादित किया है:–

कस्तूरी कुण्डलि बसै, मृग ढूंढै बन माहि।
ऐसे घट-घट राम हैं, दुनिया देखत नाहि।।

यहाँ संत कबीर के 'राम', दशरथ पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम नहीं, वरन् निराकार ईश्वर का पर्याय है। क्योंकि संत कबीर निर्गुणभक्ति धारा के कवि थे। जो सत्य है वह सभी के लिए समान है। ईश्वर को अपनी अन्तरात्मा में ही खोजना चाहिए।

ईश्वर को खोजने का मार्ग हमें आर्य समाज के नियमों में मिलता है। समाज का दूसरा नियम कहता है:–

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिान न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है।

यजुर्वेद का निम्नलिखित मंत्र इस बात का प्रमाण है:–

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम्।।

यजुर्वेद अध्याय 13 मंत्र-4

ऋषि दयानन्द सरस्वती इसका भावार्थ करते हुए लिखते हैं:–

"जब सृष्टि प्रलय को प्राप्त होकर प्रकृति में स्थिर हो जाती है और फिर उत्पन्न होती है उसके आगे जो एक जागता हुआ परमात्मा वर्तमान रहता है, उस समय सब जीव मूर्छा सी पाए हुए होते हैं। वह कल्प के अंत में प्रकाश रहित पृथ्वी आदि सृष्टि और प्रकाश सहित सूर्य आदि लोकों की सृष्टि का विधान, धारण और सब जीवों को कर्मों के अनुसार जन्म देकर सबके निर्वाह के लिए सब पदार्थों का विधान करता है। वही सब के द्वारा उपासना करने योग्य देव है, यह जानना चाहिए।"

वेदों का ज्ञान हमें ईश्वर के प्रति आस्थावान बनाता है, हमें हमारे-जीवन के प्रति आस्थावान बनाता है और प्रकृति के प्रति भी सजग करता है। हम अपने को पहचान कर, अपने व्यक्तित्व का

विकास कर, सौ वर्ष या उससे भी अधिक समय तक जीवित रह कर, ईश्वर की इस सुन्दर सृष्टि को देखें, उसके गुणों का गान करें और उसी के यश की चर्चा सुनें किसी भी प्रकार की दीनता को स्वीकार न करके पूर्ण स्वास्थ्य के साथ, पूरी शक्ति के साथ अपना जीवन बिताएं व ईश्वर के गुणों का गान करें, यही तो इस मंत्र में हम कामना करते हैं–

ओ३म् तच्चुक्षर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतम् जीवेम शरदः शतम् शृणुयाम शरदः शतम् प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम् भूयश्च शरदः शतात्॥

यजुर्वेद अध्याय 36, मंत्र 24

वेद हमें बताते हैं ईश्वर सर्वज्ञ है और जीव अल्पज्ञ। किन्तु हम निरन्तर उस सर्वज्ञ को जानने का प्रयत्न करते रहते हैं। उसके बारे में एक ही जीवन काल में पूरी तरह से ज्ञान प्राप्त कर लेना सम्भव नहीं, अतः अनेक जन्मों तक हम उसे जानने का प्रयत्न करते रहते हैं।

जब योगेश्वर श्री कृष्ण अपने प्रिय मित्र अर्जुन को युद्ध करने की प्रेरणा दे रहे थे, कर्त्तव्य कर्म करने की प्रेरणा दे रहे थे तो अर्जुन का मन चलायमान हो रहा था। अर्जुन श्री कृष्ण से पूछता है कि क्या श्रद्धावान होते हुए भी यदि किसी का मन योग से भ्रष्ट हो जाए तो क्या वह पूरी तरह नष्ट हो जाता है? तो श्री कृष्ण कहते हैं कि कल्याण करने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती। एक जन्म में लक्ष्य पूरा न मिलने पर वह अगले जन्मों में फिर सफलता प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता ही रहता है।...

श्री कृष्ण कहते हैं।।

तत्र तं बुद्धि संयोग लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते व ततो भूयः संसिद्धौ कुरूनन्दन॥

गीता अध्याय 6.43

इस प्रकार परम् ज्ञान को जानने के लिए जन्म जन्मान्तर तक

मनुष्य प्रयत्न करता ही रहता है पूर्व जन्म में प्राप्त किया ज्ञान बना रहता है। और वह उससे आगे का ज्ञान प्राप्त कर सफलता की ओर, पूर्ण ज्ञान प्राप्ति की ओर बढ़ता है।

आज के मनोवैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं। वे मानते हैं कि बालक का मस्तिष्क अब "धुली स्लेट" की तरह नहीं होता कि शिक्षक जो चाहे उस पर लिख दे। वे बीज रूप में अनेक गुण-अवगुण अपने भीतर संजोये होते हैं उनके गुणों को उभारना और पूर्णता तक पहुंचाना ही शिक्षक का काम है। मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोगों के द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि माता-पिता के अर्जित गुणों का असर भी उसकी संतति पर पड़ता है। अतः माता-पिता स्वयं भी ईश्वर के प्रति आस्थावान हों और बच्चों के लिए भी वैसा ही वातावरण बनाऐं, इसकी आवश्यकता है। क्योंकि जैसे नदियों का लक्ष्य गंतव्य सागर तक पहुँचना है ऐसे ही जीवात्मा का लक्ष्य परमात्मा की प्राप्ति है। और यह प्राप्ति आत्मानुभूति के रूप में ही होती है। परमदार्शनिक योगिराज भर्तृहरि जी ने भी ईश्वर की सत्ता का एकमात्र प्रमाण **'स्वानुभूत्येकमानाय'** कह कर दिया है। यदि हम वास्तव में ईश्वर को जानना चाहते हैं तो मन-दर्पण को साफ करें। ईश्वर की सत्ता का अनुभव हम मन में ही कर सकते हैं। योगाभ्यास द्वारा ईश्वर प्राप्ति का मार्ग सरल व प्रशस्त होता है। उस मार्ग पर चलते हुए हम अपने लक्ष्य अर्थात् मोक्ष को प्राप्त कर सकते है।

सकारात्मक दृष्टिकोण

-श्रीमती सुधा सवांत

कुछ भी बन-बस कायर मत बन।
ठोकर मार, पटक मत माथा, तेरी राह रोकते पाहन॥

यह कविता हमें सकारात्मक दृष्टिकोण रखने की प्रेरणा देती है। हमारे मार्ग में बाधाएं तो हमेशा आती हैं पर हमें अपना सकारात्मक विचार नहीं छोड़ना चाहिये। कविता मन में जोश पैदा करती है। काम तो सभी करते हैं पर सोच अलग-अलग होती है। एक कहानी है, किसी गांव में कोई यज्ञशाला बन रही थी। कई मजदूर काम कर

रहे थे। पत्थर तोड़ रहे थे। एक पथिक उस मार्ग से जा रहा था उसने पूछा–

क्या कर रहे हो भाई? क्या बना रहे हो? मजदूर गुस्से में था। बोला "देख नहीं रहे हो, पत्थर तोड़ रहा हूं।" कोई काम नहीं मिला। घर तो चलाना है। पत्नी है। परिवार का पेट तो भरना है। तो तोड़ रहा हूं पत्थर।" पथिक ने सोचा यह जरा गुस्से में है, दूसरे से पूछता हूं। उसने दूसरे मजदूर से पूछा क्या कर रहे हो भाई, दूसरे ने भी निराश स्वर में कहा, "भाई पत्थर तोड़ रहा हूँ। गांव में नया आया हूं कोई और काम नहीं मिला। पैसा तो कमाना है।" पथिक को लगा ये भी मजबूरी में काम कर रहा है।

उन्होंने एक बार फिर वही प्रश्न तीसरे मजदूर के सामने दोहराया। वह कुछ भजन भी गा रहा था, बड़े उत्साह से बोला, "अरे आपको नहीं पता, हमारे गांव में एक यज्ञशाला का निर्माण हो रहा है। प्रतिदिन हवन होगा, ईश्वर की कृपा होगी। हमें भी उनका आशीर्वाद मिलेगा। थोड़ा बहुत पैसा भी मिल जाता है, सो घर का खर्चा उससे चल जाता है।" पथिक उत्तर सुन कर संतुष्ट हुआ।

यह घटना मैं अक्सर विद्यार्थियों को सुनाती हूं और पूछती हूं कि किस मजदूर का उत्तर उन्हें अच्छा लगा तो सभी कहते हैं कि तीसरे मजदूर का। आपको भी ऐसा ही लगा होगा। यही है सकारात्मक दृष्टिकोण। वास्तव में काम तो सभी करते हैं परन्तु जो काम करते हुए आनंद का भी अनुभव करते हैं उसे बोझ समझकर नहीं करते, वे स्वयं भी प्रसन्न रहते हैं, जीवन में सफल रहते हैं और दूसरों को भी प्रसन्नता प्रदान करते हैं। यही सकारात्मक दृष्टिकोण हमारी सफलता की पहली सीढ़ी है। हम कैसे सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाएं? आईए विचार करें।

1. हमारे जीवन को संतुलित रूप से चलाने, सुचारू रूप से चलाने का प्रथम उपाय है–

हम लक्ष्य निर्धारित करें और उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हर संभव उपाय करें। उसे हर रूप में परखें। विद्यार्थियों के

लिए विद्या अध्ययन ही प्रथम कर्त्तव्य है और व्यवसाय अपनाना उनका लक्ष्य है। लक्ष्य को हर परिस्थिति में प्राप्त करने का प्रयत्न करें।

2. मार्ग की बाधाओं से निराश न हों। कठिनाईयां तो हर काम में आती हैं। यही कठिनाईयां हमारी शक्ति को बढ़ाती हैं। आप अक्सर पहाड़ों पर देखते होंगे कि वहां के लोग पहाड़ पर सामान लेकर भी जल्दी चल पाते हैं। हम यात्री उतनी जल्दी नहीं चल पाते। कारण स्पष्ट है। पहाड़ के उबड़-खाबड़, ऊंचे-नीचे रास्तों ने और लगातार अभ्यास ने उनकी शारीरिक शक्ति को बढ़ा दिया है। इसी तरह काम करते समय कठिनाई हमारे संकल्प को और अधिक दृढ़ बनाएंगी। हम अधिक परिश्रम से, अधिक मनोयोग से काम करेंगे ताकि अंत में हमें सफलता मिले।

3. ध्यान की एकाग्रता के लिए हमें प्राणायाम, व्यायाम और संतुलित भोजन करना चाहिए। अधिक काम की वजह से कई बार हम समय पर भोजन नहीं करते। या जल्दी-जल्दी में कर लेते हैं। ऐसा न करें। आप जानते हैं कि काम चाहे जितना जरूरी हो-पेट्रोल न डालें तो कार नहीं चलेगी। हमारा शरीर भी वैसा ही साधन है जिसे समय पर संतुलित भोजन की आवश्यकता है।

4. समय प्रबंधन की सफलता के लिए आवश्यक है कि हम समय तालिका बना कर काम करें। कभी बहुत काम किया तो कभी कुछ नहीं-ऐसा न करें। और लगातार प्रयत्न करना चाहिए कि निर्धारित समय में काम पूरा हो जाए।

5. अपने मनोभावों को संतुलित एवं संयमित रखें। धर्म युद्ध के लिए अर्जुन को प्रेरित करते हुए योगेश्वर श्रीकृष्ण ने यही कहा था कि दु:ख या सुख में अपने को बहुत दुखी या सुखी मत करो।

योगेश्वर श्री कृष्ण ने कहा:-

दुखेष्वनुदिग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।

वीतरागमयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते।। अध्याय 2 श्लोक 56

इस प्रकार हर परिस्थिति में समभाव रह कर हम जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

छोटी आयु में बड़े धार्मिक काम करने वाले अमर मनीषी पं. गुरुदत्त विद्यार्थी

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

महर्षि दयानन्द के साक्षात् शिष्यों में प्रथम व यशस्वी शिष्य प. गुरुदत्त विद्यार्थी का जन्म 26 अप्रैल, 1864 ई. को अविभाजित भारत के पश्चिमी पंजाब राज्य के मुलतान नगर में हुआ था। महर्षि दयानन्द के जीवनकाल 1825–1883 में देश भर के अनेक लोग उनके सम्पर्क में आये जिनमें से कई व्यक्तियों को उनका शिष्य कहा जाता सकता है परन्तु सभी शिष्यों में पं. गुरुदत्त विद्यार्थी उनके अनुपम व अन्यतम शिष्य थे। आपके पिता लाला कृष्ण जी फारसी भाषा के असाधारण विद्वान् थे तथा राजकीय सेवा में अध्यापक थे। आपकी शिक्षा उर्दू और अंग्रेजी में मुलतान व लाहौर में सम्पन्न हुई थी। जन्म से ही आप अत्यन्त मेधावी थे और वैरागी प्रकृति के थे। विद्यार्थी जीवन व युवावस्था में पुस्तकों को पढ़ने में आपकी सर्वाधिक रुचि वा लग्न थी। जो भी पुस्तक हाथ में आती थी उसे आप अल्प समय में ही आद्योपान्त पढ़ डालते थे। बचपन में ही आपने उर्दू व अंग्रेजी के प्रसिद्ध विद्वानों के ग्रन्थों को पढ़ लिया था। उर्दू में कविता भी कर लेते थे। विज्ञान आपका प्रिय विषय था। पाश्चात्य वैज्ञानिकों की तरह ही आप नास्तिक तो नहीं परन्तु ईश्वर के अस्तित्व में संशयवादी अवश्य हो गये थे। लाहौर स्थित देश के सुप्रसिद्ध गर्वनमेंट कालेज के आप सबसे अधिक मेधावी व योग्यतम विद्यार्थी थे तथा अपनी कक्षा में सर्वप्रथम रहा करते थे। विज्ञान में एम. ए. में भी आप पूरे पंजाब में सर्वप्रथम रहे जिसमें सारा पाकिस्तान एवं दिल्ली तक भारत के अनेक भाग सम्मिलित थे। यद्यपि आप व्यायाम आदि करते थे और स्वास्थ्य का ध्यान भी रखते थे परन्तु पढ़ने का शौक ऐसा था कि इस कारण से आप असावधानी कर बैठते थे। 26 वर्ष की आयु पूरी होने से एक सप्ताह पूर्व ही आपका देहान्त हो गया था। इस कम आयु में भी आपने अनेक अविस्मरणीय कार्य किए जिससे आपको सदा याद किया जाता रहेगा। आपने

महर्षि दयानन्द के बाद स्वयं को उन जैसा बनाने का प्रयास किया था। वैदिक विद्याओं एवं वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में आपकी भी वही भावना थी और वैसा ही उत्साह था जैसा कि महर्षि दयानन्द में देखने को मिलता था। इसलिए सभी मित्र और निकट सहयोगी आपको वैदिक धर्म का सच्चा विद्वान व नेता स्वीकार करते थे।

प. गुरुदत्त विद्यार्थी को इस बात का श्रेय प्राप्त था कि उन्होंने महर्षि दयानन्द के न केवल दर्शन ही किए थे अपितु उनकी मृत्यु के दृश्य को कुछ ही दूरी से समाने से देखा था। उन दिनों आप ईश्वर के अस्तित्व के प्रति संशयवादी थे। जिन शारीरिक कष्टों से महर्षि दयानन्द आक्रान्त थे और उस पर भी जिस सहजता से उन्होंने मृत्यु का संवरण किया उसे देखकर पण्डित गुरुदत्त जी दंग रह गये थे और उनका नास्तिकता मिश्रित संशयवाद तत्क्षण दूर हो गया था। इस घटना के बाद तो आपका जीवन पूरी तरह से ज्ञानार्जन, वेदों के प्रचार–प्रसार व सामाजिक कार्यों में व्यतीत हुआ। इन कार्यों में जहाँ कुछ पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन व उच्चस्तरीय लेखों का प्रणयन शामिल था वहीं उन्होंने दयानन्द एंग्लो वैदिक स्कूल की स्थापना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। डी.ए.वी. स्कूल के लिए धन संग्रह का जो कार्य किया गया उसमें सबसे प्रमुख व प्रभावशाली सफल भूमिका आपकी ही थी। आप जिस स्थान पर भी डी.ए.वी स्कूल की स्थापना पर उपदेश करते थे तो लोग भावविभोर होकर अपना समस्त वा अधिकांश धन दान कर देते थे। वह डी.ए.वी. के आन्दोलन से पूरी आत्मना जुड़े थे और जब डी.ए.वी में अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव अधिक हो गया और संस्कृत व हिन्दी भाषा को उसका उचित स्थान नहीं मिला, तो आप उससे पृथक भी हो गये थे। यदि आपने डी.ए.वी के लिए अपना योगदान न दिया होता तो हम कल्पना कर सकते हैं कि शायद डी.ए.वी आन्दोलन सफल न हुआ होता, अतः डी.ए.वी. के विकास व उन्नति में आपका योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

महर्षि दयानन्द के बाद उनके साक्षात् शिष्यों में आर्ष संस्कृत

व्याकरण का कोई प्रमुख प्रथम विद्वान् हुआ तो वह आप ही थे। आपने आर्य समाज, लाहौर की सदस्यता लेकर संस्कृत का अध्ययन आरम्भ कर दिया था। आप मेधावी तो थे ही इसलिये संस्कृत का आपका अध्ययन शीघ्र ही हो गया था। न केवल आपने संस्कृत पढ़ी ही अपितु उस युग में आप संस्कृत के सबसे बड़े समर्थक थे। यह बात तब थी जब कि आपका अंग्रेजी पर असाधारण अधिकार था। आज भी अंग्रेजी के विद्वानों को आपके ग्रन्थों को पढ़ने के लिए अंग्रेजी के शब्द कोषों आदि का सहारा लेना पड़ता है। संस्कृत के प्रचार–प्रसार का कार्य महर्षि दयानन्द के बाद यदि प्रथम प्रभावशाली रूप से किसी ने किया तो वह पं. गुरुदत्त जी ने ही किया। आपने अपने घर पर ही संस्कृत श्रेणी व कक्षायें खोल रखी थीं जिसमें सरकारी सेवा में कार्यरत बड़ी संख्या में लोग संस्कृत अध्ययन किया करते थे जिनमें कई उच्चाधिकारी थे। संस्कृत पर आपके असाधारण अधिकार का प्रमाण आपका ईश, माण्डूक्य व मण्डक उपनिषदों का अंग्रेजी में किया गया प्रभावशाली व प्रशंसनीय भाष्य वा अनुवाद है। यह कार्य उन दिनों सरल नहीं था और कोटि का भाष्य अंग्रेजी में किया जाना शायद किसी के लिए भी सम्भव नहीं था।

भारतीय धर्म व संस्कृति का मूल आधार वेद और वैदिक साहित्य है जो संसार में प्राचीनतम व उत्पत्ति व रचना की दृष्टि से प्रथम है। अंग्रेज भारत में आये तो भारतीयों को गुलाम बनाया और चाहते थे कि उनका शासन चिरस्थाई हो। उन्होंने यहां के धर्म व धर्म ग्रन्थों का अध्ययन भी किया व कराया जिससे यह निष्कर्ष निकला कि भारतीय धर्म व संस्कृति के ग्रन्थों का मिथ्यानुवाद व तिरस्कार किये बिना अंग्रेजों का राज्य स्थाई रूप नहीं ले सकेगा। अतः प्रो. मैक्समूलर आदि अनेक अंग्रेज विद्वानों ने संस्कृत का अध्ययन कर वेद और वैदिक साहित्य पर असत्य, भ्रामक, अविवेकपूर्ण व पक्षपातपूर्ण टिप्पणियां कीं। वह अपने उद्देश्य में अवश्य सफल होते यदि महर्षि दयानन्द का भारत में प्रादुर्भाव न हुआ होता। महर्षि दयानन्द ने भारत को स्थाई रूप से गुलाम बनाने के मार्ग को वेदों

के सत्य स्वरूप का प्रचार करके अवरुद्ध कर दिया। एक ओर जहां सभी विदेशी विद्वानों ने सायण व महीधर के भाष्यों को अपने अध्ययन व प्रचार का साधन व उद्देश्य बनाया, वहीं महर्षि दयानन्द ने अपने संस्कृत व वैदिक साहित्य के अपूर्व वैदुष्य से सायण, महीधर आदि सभी वदेभाष्यकारों की सप्रमाण त्रुटियां इंगित कर उन्हें मिथ्या व अयथार्थ सिद्ध किया। महर्षि दयानन्द की मृत्यु उनके विरोधियों द्वारा विषपान से 30 अक्टूबर, सन् 1883 को अजमेर में हुई। उनके समय व बाद के समय में विदेशियों द्वारा भारतीय धर्म व संस्कृति मुख्यतः वेद और वैदिक साहित्य पर आक्षेप होते रहे जिसका प्रबल प्रतिवाद व सप्रमाण खण्डन पं. गुरुदत्त विद्यार्थी ने अपने अंग्रेजी लेखों व पुस्तकों के द्वारा किया। यहां हम उनके अंग्रेजी में लिखे गये लघु व अन्य ग्रन्थों का परिचय देना उचित समझते हैं। उनके ग्रन्थ हैं—The Terminolgoy of the Vedas and the European Scholars, Origin of Thought and Language, Vedic Texts, Nos. 1-2 (Vayu Mandal, Water and Grihastha), Ishopanishad, Mandukyopanishad, Mundakopanishad, Evidences of Human Spirit, The Realities of Inner Life, Pecuniomania, Righteousness of Unrighteousness of Flesh Eating. Man's Progress Downwards, The Nature of Conscience, Conscience and the Vedas, Religious Sermons, A reply to Some Criticism of Swami's Veda Bhashya, Criticism on Monier Williams' Indian Wisdom etc. etc. अल्पायु में मृत्यु हो जाने के कारण बहुत से उनके ग्रन्थों को सुरक्षित नहीं रखा जा सक जो कि विद्वानों व अध्येताओं के लिए एक बहुत बडी हानि है।

पण्डित जी का जीवन बहुआयामी जीवन था। उन पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। लेख की सीमा होती है अतः इतना कहना ही समीचीन है कि उन्होंने प्राणों की चिन्ता किए बिना वेदों के प्रचार प्रसार का कार्य किया। वह लोकप्रिय वक्ता व उपदेशक थे। जनता उनके विचारों को ध्यान से सुनती थी और उनकी बातों का पालन

करती थी। वह ऐसे वक्ता थे जिनकी कथनी व करनी एक थी। वह अपने जीवन का एक-एक क्षण वैदिक धर्म, संस्कृति के उत्थान व संवृद्धि के लिए व्यतीत करते थे। उनके कार्यों का उद्देश्य वैदिक धर्म का अभ्युदय, सामाजिक सुधार व देश सुधार, अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि, लोगों को ज्ञानी बनाकर देश व विश्व से सभी प्रकार के अज्ञान व अन्धविश्वासों को दूर करना आदि थी। वह अपने समय के सबसे कम आयु के अजेय धार्मिक योद्धा थे। उनके कार्यों से वैदिक धर्म का संवर्धन हुआ जिसके लिए देश और समाज उनका ऋणी है। उनकी मृत्यु क्षय रोग से 19 मार्च, सन् 1890 को लाहौर में प्रातःकाल हुई थी। मृत्यु के समय उनकी आयु 26 वर्ष थी। परिवार में उनकी माता, पत्नी व दो छोटे पुत्र थे। सहस्रों लोग उनकी अन्तयेष्टि में सम्मिलित हुए थे। पण्डित जी की मृत्यु पर न केवल आर्य समाज के नेताओं ने अपितु अनेक मतों के विद्वानों ने भी उन्हें श्रद्धाजंलि देते हुए शोक प्रकट किया था। पण्डित जी ने इतिहास में वह कार्य किया जिसका देश व विश्व पर गहरा प्रभाव हुआ। अपने कार्यों से वह सदा-सदा के लिए अमर रहेंगे। उनका साहित्य जीवन दर्शन व कार्य ही उनके स्मारक हैं। पुण्य तिथि पर उन्हें विनम्र हार्दिक श्रद्धांजलि।

ईश्वर का नाम 'सच्चिदानन्द' क्यों व कैसे?

—मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

ईश्वर के अनेक नामों में से एक नाम **'सच्चिदानन्द'** भी है। प्रायः हम सुनते हैं कि जयघोष करते हुए धार्मिक आयोजनों में कहा जाता कि 'श्री सच्चिदानन्द भगवान की जय हो'। यह सच्चिदानन्द नाम ईश्वर का क्यों व किसने रखा है? इसका तात्पर्य व अर्थ क्या है? इसी पर विचार करने के लिए कुछ पंक्तियां लिख रहे हैं। सृष्टि के समग्र ऐश्वर्य का स्वामी होने के कारण इस सृष्टि के रचयिता, पालन कर्ता व संहारकर्ता को ईश्वर कहा जाता है। इस संसार में जितना भी वैभव या धन, दौलत जो ऐश्वर्य के ही भिन्न नाम है,

इसका स्वामी केवल एक सृष्टिकर्ता ईश्वर है। ईश्वर के तीन प्रमुख कार्यों–सृष्टि की रचना, इसका पालन व प्रलय करने के कार्यो को करने वाला तथा सृष्टि की समस्त सम्पत्ति का स्वामी वही एक ईश्वर है, यह जान लेने पर अब सच्चिदानन्द शब्द व ईश्वर के स्वरूप पर विचार करते हैं। सच्चिदानन्द मुख्यतः तीन शब्दों व पदों को जोड़कर बनाया गया है जिसमें पहला पद है सत्य, दूसरा है चित्त और तीसरा पद आनन्द है। यह ईश्वर का स्वाभाविक स्वरूप अनादि काल से है वह अनन्त काल अर्थात् हमेशा ऐसे का ऐसा ही रहेगा, इसमें कोई परिवर्तन कभी नहीं होगा, देश–काल–परिस्थितियों का इस पर कोई प्रभाव नहीं होगा।

सत्य शब्द किसी के अस्तित्व की सत्यता को कहते हैं। ईश्वर सत्य है, यदि ऐसा कहें तो इसका अर्थ होता है कि ईश्वर का अस्तित्व व यथार्थ है अर्थात् सत्य है। इसका विपरीत अर्थ करें तो कहेंगे कि ईश्वर के अस्तित्व होना मिथ्या नहीं है। ऐसा नहीं है कि ईश्वर हो ही न और हम कहें कि उसका अस्तित्व इस संसार व जगत में विद्यमान व उपस्थित है। इसी प्रकार से जिन पदार्थो को भी सत्य कहा व माना जाता है उनका अस्तित्व होता है और जिनका अस्तित्व नहीं होता वह मिथ्या पदर्थ होते व कहे जाते हैं। इससे यह ज्ञात हुआ कि ईश्वर की सत्ता अवश्य विद्यमान है, यह सत्य है, झूठ नहीं है। अब दूसरे शब्द चित्त पर विचार करते हैं। चित्त का अर्थ है चेतन पदार्थ। चेतन का अर्थ है कि उसमें संवेदनशीलता है, जड़ता नहीं। ईश्वर जड़ या भौतिक पदार्थ नहीं है। वह जड़ के विपरीत चेतन गुण वाला तथा भौतिक के स्थान पर अभौतिक पदार्थ है। जड़ पदार्थों में स्वतः कोई क्रिया नहीं होती, वह चेतन की प्रेरणा या ईश्वर द्वारा निर्मित प्राकृतिक नियमों के अनुसार होती है जिन्हें भी हम ईश्वर की प्रेरणा कह सकते हैं है। हम व हमारी आत्मा चेतन है, जड़ नहीं। यह मस्तिष्क जो कि हमारी आत्मा का साधन है, इसकी सहायता से आत्मा सोचती है और विचार करने का सामर्थ्य सभी चेतन आत्माओं में होता है। यदि आत्मा न हो तो मस्तिष्क

निष्क्रिय ही रहेगा। इसका कोई सकारात्मक उपयोग नहीं होगा। आत्मा न केवल मस्तिष्क अपितु शरीर के सभी अंगों व इन्द्रियों का, मन व मस्तिष्क की सहायता से अपने उद्देश्य की पूर्ति में, साधन रूप में उपयोग करती है। शरीर में आत्मा द्वारा पैर को इशारा या प्रेरणा करने पर पैर चलने लगते हैं, रुकने का इशारा करने पर रूक जाते हैं। ऐसी ही सब अंगों की स्थिति है। इसी प्रकार से ईश्वर भी मूल प्रकृति को प्रेरणा कर सृष्टि की रचना करते हैं और सृष्टि की अवधि पूरी होने पर इसका प्रलय करते हैं। वह जीवात्माओं के कर्मों के साक्षी होकर उसके शुभाशुभ अर्थात् पुण्य-पाप कर्मों के फल देते हैं। उन्हें सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी होने के कारण सभी जीवों के अतीत वर्तामान के कर्मों का पूरा-पूरा ज्ञान होता है। कोई भी जीव कर्म करने के बाद उसके फल को भोगे बिना छूटता नहीं है। पुण्य कर्मों का फल सुख व अशुभ अथवा पाप कर्मों का फल दुख होता है। जन्म व मरण भी हमारे शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ईश्वर की व्यवस्था से प्राप्त होते हैं। यह था ईश्वर का चेतन स्वरूप और उस स्वरूप के द्वारा किये जाने वाले कुछ कार्य।

आनन्द भी ईश्वर का स्वाभाविक गुण है। वह आनन्द से युक्त व पूर्ण है। उसमें अपने लिये कोई इच्छा नहीं है। इच्छा का कोई उद्देश्य होता है। इच्छा तो तब हो जब कोई अपूर्णता या आवश्यकता हो। ऐसा ईश्वर में कुछ घटता नहीं है। वह सदा-सर्वदा-हर समय सुख की पराकाष्ठा से परिपूर्ण है और हमेशा रहेगा। आनन्द का गुण होने के कारण वह सदा शान्तचित्त रहता है। इसमें न क्रोध होता है, न कोई निजी कामना, न रोग, शोक और मोह अथवा राग व द्वोष। इस प्रकार से वह सदा स्थिर चित्त रहकर संसार का संचालन व पालन करता है। उसका यह आनन्द का गुण हम जीवों के लिए बहुत लाभदायक है। हम विधि पूर्वक स्तुति-प्रार्थना-उपासना करके उससे इच्छित कामनायें सिद्ध व पूरी कर सकते हैं। जीवात्मा का स्वरूप ईश्वर की तुलना में सत्य-चित्त-आनन्द की अपेक्षा सत्य-चित्त मात्र ही है। जीवात्मा में आनन्द का अभाव है। इसी कारण वह

जन्म-जन्मान्तरों में सुख व आनन्द की खोज व प्राप्ति में भटकता दौड़ लगा रहा है, उसमें क्षणिक सुख है जो कि अस्थाई है। वह ईश्वर से प्राप्त होने वाले आनन्द की तुलना में नगण्य है। ईश्वर व उसके आनन्द को विवेक से ही जाना जा सकता है। इसी कारण विवेकशील धार्मिक लोग धन व भौतिक पदार्थों के पीछे दौड़ने के स्थान पर ईश्वर की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते हैं। यही वास्तविक धर्म-कर्म होता है। स्तुति, प्रार्थना, उपासना, यज्ञ, अग्निहोत्र, सेवा, परोपकार, माता-पिता-अतिथियों का सत्कार आदि से आनन्द की प्राप्ति व दुःखों से छूटने के लक्ष्य की प्राप्ति होती है। ईश्वर का आनन्द कैसे प्राप्त होता है? इसका विधान कुछ ऐसा है कि जैसे बटन चलाने पर हमारे घरों के बल्ब जल उठते हैं वैसे ही उपासना में ईश्वर से सम्पर्क हो जाने अर्थात् ध्यान में स्थिरता व निरन्तरता आ जाने पर उसका आनन्द हमारी आत्मा में प्रवाहित होने से हमारे दुःख व क्लेश दूर होकर हम आनन्द से भरपूर हो जाते हैं। सिद्ध योगियों को यह आनन्द मिलता है। योग में आंशिक सफलता मिलने पर भी यह आनन्द प्राप्ति का क्रम आरम्भ हो जाता है। योगी जितना आगे बढ़ता है उतना ही अधिक आनन्द उसको प्राप्त होता है। इस प्रकार हमने ईश्वर के आनन्द स्वरूप पर भी विचार किया और कुछ जानने का प्रयास किया है।

अतः सत्य, चित्त व आनन्द से युक्त होने के कारण ईश्वर के प्रमुख नामों में से एक नाम **"सच्चिदानन्द"** भी है। हम आशा करते हैं कि पाठक इसे जानने के बाद ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना अर्थात् क्रियात्मक योग की ओर प्रेरित हो सकते हैं और होना भी चाहिये। यौगिक जीवन ही आदर्श मानव जीवन है। इसके विपरीत तो भोगों से युक्त जीवन ही होता है जिसका परिणाम जन्म-जन्मान्तरों के बन्धन, रोग, दुःख व अवनति का मिलना होता है। मार्ग का चयन हमारे हाथ में है। जिसे योग मार्ग अच्छा लगे वह उस पर चले और जिसे भोग मार्ग अच्छा लगे वह उस पर चल सकता है, फल देना ईश्वर के हाथ में है। प्रसिद्ध सत्य लोकोक्ति है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र और फल भोगने में परतन्त्र है।

विशेष प्रकाशन योजना

सन् 1987 में पिताश्री विजयकुमार जी ने एक महत्वाकांक्षी योजना पर कार्य करते हुए **प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी** तथा **डॉ. भवानीलाल जी भारतीय** के सहयोग से 'स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली' का बृहद प्रकाशन ग्यारह खण्डों में किया था। यह ग्रन्थावली पर्याप्त समय से अनुपलब्ध थी तथा पाठकों का निरन्तर अग्रह था कि एक बार पुनः इसका प्रकाशन किया जाए।

आर्य जनता के विशेष अनुरोध पर अब यह ग्रन्थावली (लगभग 2200 पृष्ठों में) जून 2015 में पुनः उपलब्ध होगी। अब यह दो बृहद खण्डों में प्रस्तुत की जाएगी तथा इसका मूल्य होगा रु. 2200.00 मात्र।

यह सीमित संख्या में ही छपेगी इसीलिए जो पाठक इसे प्राप्त करने के इच्छुक हों वह इसे अग्रिम बुक करा सकते हैं। अग्रिम बुक कराने के लिए कृपया रु. 1500/- अग्रिम देकर 30 जून 2015 तक हमारे कार्यालय से ले सकते हैं। डाक द्वारा मंगाने पर कृपया 1650/- अग्रिम भेंजें।

अग्रिम राशि निम्न बैंक में भी जमा करा सकते हैं:—

बैंक ऑफ इण्डिया, अंसारी रोड, नई दिल्ली-110002, खाताः विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, खाता सं०- 603220100011589, IFSC Code BKID 0006032

प्राप्ति स्थान

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

4408, नई सड़क, दिल्ली-110006

दूरभाषः 23977216, 65360255

email : ajayarya16@gmail.com

श्रद्धानन्द ग्रन्थावली: दो खण्डों में

राष्ट्र पुरुष श्रद्धानन्द ने भारत में धर्म, समाज, संस्कृति तथा शिक्षा के क्षेत्र में चौमुखी क्रांति का सूत्रपात किया था। उन्होंने स्वयं को कल्याण मार्ग का एक ऐसा पथिक बताया जो ऋषि दयानन्द के दिव्य जीवन से प्रेरणा लेकर निज के तथा संसार के कल्याण हेतु निरन्तर प्रगति पथ पर आगे बढ़ता ही रहा।

स्वामी श्रद्धानन्द जहाँ एक निष्ठावान धर्म प्रचारक, समाज सुधारक, शिक्षा शास्त्री तथा स्वाधीनता संग्राम के अजेय सेनानी थे, वहाँ वे सरस्वती के वरद पुत्र भी थे। उन्होंने हिन्दी, उर्दू तथा अंग्रेजी में विपुलकाय ग्रंथों का प्रणयन किया है। उनके सभी ग्रंथों का प्रामाणिक और अधिकृत संस्करण श्रद्धानन्द ग्रंथावली के दो खण्डों में पुन: प्रकाशित किया जा रहा है।

इसमें स्वामी जी की स्वलिखित आत्मकथा के अतिरिक्त उनका संस्मरणात्मक साहित्य (बंदी जीवन के विचित्र अनुभव तथा इनसाइड कांग्रेस), वेदाधारित धर्मोपदेश, स्वामी दयानन्द के जीवन और व्यक्तित्व का मूल्यांकन परक साहित्य तथा धर्म समाज के इतिहास की स्मरणीय घटनाओं को लिपिबद्ध करने वाली रचनाएं एक साथ ही उपलब्ध कराई गई है। 'आर्य समाज एण्ड इट्स डिट्रेक्टर्स ए विण्डिकेशन' जैसे दुलर्भ किन्तु महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के प्रामाणिक अनुवाद को भी ग्रन्थावली में समाविष्ट किया गया है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के उर्दू में संकलित 'कुलियात संन्यासी' तथा सद्धर्म प्रचारक व अन्य पत्र पत्रिकाओं से उनके लेख व शास्त्रार्थों का संग्रह सम्पादन तथा अनुवाद भी ग्रन्थावली के खण्डों में समाया है।

अप्रैल २०१५ Registered with Regn. of News Paper for India
वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG)-11/8030/2015-17, U(DGPO) 01/2015-17 31.12.2017

2015 में प्रकाशित होने वाला उपयोगी साहित्य

ऋग्वेद भाष्य (चार भागों में) स्वामी दयानन्द सरस्वती रु. 2800.00

प्रथम बार कम्प्यूटर द्वारा मुद्रित शुद्धतम् सामग्री, नयनाभिराम छपाई, आकर्षक आवरण, उत्तम कागज, मजबूत जिल्द, सुन्दर टाईप। कुल 5200 पृष्ठों में पूर्ण, शब्दार्थ व मन्त्रानुक्रमणिका सहित।

The Truth About the Vedas Dr. Bhawanilal Bhartiya Rs. 60.00

English translation of Vedic Kathayon Ka Sach, translated in English by Pt. Satyaprakash Beegoo, Arya Upadeshak, Mauritius.

An Introduction of the Vedas: Dr. Tulsiram

This Book is a self-contained Introduction to the author's translation of all the four Vedas, already published in eight volumes.

भारतवर्ष का इतिहास	**पं. भगवद्दत्त**
स्वास्थ्य के शत्रु अण्डे व मांस	**स्वामी जगदीश्वरानन्द**
रामायण की विशेष शिक्षाएँ	**स्वामी ब्रह्ममुनि**
महाभारत की विशेष शिक्षाएँ	**स्वामी ब्रह्ममुनि**
हम बचें कैसे?	**प्रो. रामविचार**
वैदिक धर्म और आर्य समाज के सिद्धान्त	**प्रो. रामविचार**

2015 में पुनः प्रकाशित होने वाला साहित्य

शंका समाधान	पं. रामचन्द्र देहलवी	6.00
स्वामी दयानन्द और विवेकानन्द	डॉ. भवानीलाल भारतीय	150.00
वेद प्रवचन	पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय	160.00
उपदेश मञ्जरीः स्वामी दयानन्द,	संपादक डॉ. भवानीलाल भारतीय	50.00
सत्संग भजनावली	सं. डॉ. दिलीप वेदालंकार	
Back to the Vedas	**Madhan Raheja**	**Rs. 150.00**

प्रकाशक–अजयकुमार, मुद्रक–अजयकुमार, स्वामी–अजयकुमार, गोविन्दराम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली–6, अजयकुमार द्वारा सम्पादित, प्रिंटर्स–अजय प्रिंटर्स, 1586/C-13, नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 में प्रिंट करा, वेदप्रकाश कार्यालय, 4408, नई सड़क, दिल्ली–6 से प्रसारित किया। न्यायक्षेत्र–दिल्ली।